www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक - साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : ३९

सोमवार ३० जून, '६९

अन्य पृष्ठों पर

मास्को-सम्मेलन —सम्पादकीय ४८३

हमें आजाद गाँवों का आजाद देश बनाना है ! —विनोबा ४८४

ग्राम-समुदायों की प्राचीन व्यवस्था... —कार्ल मार्क्स ४८५

अन्य स्तम्भ

श्रद्धांजलि

संपादक के नाम चिट्ठी

आन्दोलन के समाचार

परिशिष्ट
"गाँव की बात"

भारत में

ग्रामदान :	१,०६,५१७
प्रखण्डदान :	७४७
जिलादान :	१६

बिहार में

ग्रामदान :	४५,०६०
प्रखण्डदान :	४२५
जिलादान :	१०

(२३ जून '६९ तक)

सम्पादक
राजगोपाल

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४२८५

अहिंसक संगठन की चुम्बक-शक्ति

बरसों से जो बात मैं कहता रहा हूँ, वह यह है कि श्रम पूँजी से कहीं श्रेष्ठ है। मैं श्रम और पूँजी का ब्याह करा देना चाहता हूँ। वे दोनों मिलकर आश्चर्यजनक काम कर सकते हैं। परन्तु यह तभी हो सकता है, जब मजदूर इतने समझदार हो जायँ कि वे आपस में सहयोग करें और फिर सम्मानपूर्ण समानता की शर्तों पर पूँजीपतियों के साथ सहयोग करें। पूँजीपति मजदूरों पर नियंत्रण इसलिए करते हैं कि वे मेल की कला जानते हैं। बिखरी हुई पानी की बूँदें यों ही सूख जाती हैं, लेकिन वे एक दूसरे से मिलकर महासागर बनाती हैं, जिसकी चौड़ी छाती पर बड़े-बड़े जहाज चलते हैं। इसी तरह अगर संसार के किसी भाग में सारे मजदूर आपस में मिल जायँ, तो वे ऊँची मजदूरी के लालच में नहीं फँसेंगे या लाचार होकर थोड़े-से पैसे की तरफ आकर्षित नहीं होंगे। मजदूरों का सच्चा और अहिंसक संगठन ऐसे चुम्बक का काम करेगा जो सारी आवश्यक पूँजी को अपनी ओर खींच लेगा। फिर तो पूँजीपति संरक्षक बनकर ही रह सकेंगे। जब वह सुखद दिन आयेगा, पूँजीपति और मजदूर में कोई भेद नहीं रहेगा, तब मजदूरों को काफी भोजन, अच्छे और साफ-सुथरे मकान, उनके बच्चों को हर प्रकार की जरूरी शिक्षा, स्व-शिक्षा के लिए काफी अवकाश और उचित डाक्टरी सहायता मिलेगी।[1]

एक शब्द नीति के विषय में। वह पूँजीपति-विरोधी नहीं है। विचार यह है कि पूँजीपतियों से मजदूरों का वाजिब हिस्सा ही लिया जाय, अधिक न लिया जाय; और वह भी पूँजीपतियों को निर्बल और लाचार बनाकर नहीं, बल्कि मजदूरों में भीतर से सुधार करके और उनकी अपनी ही आत्म-जागृति से, गैर-मजदूर नेताओं की चालाकी और चालबाजियों से भी नहीं, बल्कि मजदूरों को यह शिक्षा देकर कि वे स्वयं ही अपने नेतृत्व का और अपने ही आत्म-निर्भर और स्वावलंबी संगठन का विकास करें। उसका सीधा लक्ष्य राजनीति बिलकुल नहीं है। उसका प्रत्यक्ष ध्येय भीतरी सुधार और भीतरी बल का विकास है। जब यह विकास सम्पूर्ण हो जायेगा, तो उसका अप्रत्यक्ष राजनीतिक परिणाम कुदरती तौर पर जबरदस्त होगा।

इसलिए मजदूर जब स्वावलंबी इकाई बन जायँगे, तब किसी प्रथम श्रेणी के महत्व की प्रत्यक्ष, राजनीतिक सत्ता के लिए उनका उपयोग करने या उन्हें संगठित करने का मेरा कोई दूर का भी विचार नहीं है। मेरी राय में मजदूरों को राजनीतिज्ञों के हाथों में राजनीतिक शतरंज का मोहरा नहीं बनना चाहिए। उन्हें केवल अपने ही बल के आधार पर उस शतरंज पर अपना प्रभुत्व कायम करना चाहिए।[2]

मो. क. गांधी

---

(१) 'हरिजन' : ७-९-'४७

(२) 'इज इण्डिया डिफरेंट ?' : पृष्ठ २५।

www.vinoba.in

स्वर्गीय गोपालराव काले

विनोबाजी के बचपन से अब तक के साथी श्री गोपालराव ऊर्फ आबासाहब काले का निधन गत ३१ मई '६९ को नागपुर के मेडिकल कालेज-अस्पताल में हुआ। पिछले छः माह से उनकी शक्ति क्षीण होती गयी। काफी उपचार चलते रहे, लेकिन अन्त में काल कवलित हो ही गये!

विनोबाजी, गोपालराव काले, भाई धोत्रे और बाबाजी मोघे, यह चौकड़ी अपने जमाने में बड़ौदा के युवकों में मशहूर थी। उसी समय चारों ने देश-सेवा में जीवन समर्पित करने का संकल्प किया। विनोबाजी के समान गोपालराव भी संस्कृत में दर्शन-शास्त्र के ज्ञाता बने। महाविद्यालय की पढ़ाई के काल में ही उस समय की परम्परा के अनुसार गोपालराव का विवाह हुआ। निर्वाह के लिए वकील का व्यवसाय कर शेष समय देशकार्य में लगाने की इच्छा थी, लेकिन सन् १९२० में ही गोपालराव असहकार-आन्दोलन में कूद पड़े। विनोबाजी द्वारा संचालित विद्यार्थी-मण्डल के आप सक्रिय सदस्य थे।

सन् १९२० से अब तक लगभग पचास साल उन्होंने विभिन्न प्रकार से देश-सेवा की। विनोबा वर्धा आये तो गोपालराव भी आये। विनोबाजी की 'महाराष्ट्र-धर्म' पत्रिका में आप सहकारी थे और उनके बाद संपादक भी रहे। मराठी 'हरिजन', 'हरिजन-बंधु' आदि पत्रिकाओं के संपादन में गांधीजी-विनोबाजी की मदद की। बाद में सन् १९५३ में "साम्ययोग" पत्रिका प्रथम पाक्षिक रूप में उनके संपादन में निकलने लगी। वर्धा जिले के सैकड़ों गाँवों में पदयात्रा कर उन्होंने भूदान-ग्रामदान भी प्राप्त किये।

सत्तापिपासा नहीं रखनी चाहिए, लेकिन आवश्यकता हो तो शासन-सत्ता हाथ में लेने में कोई पाप नहीं मानना चाहिए, ऐसा सोचकर जनता के आग्रह से स्वतंत्र भारत के पुराने मध्यप्रदेश में गोपालराव कुछ समय तक मंत्री भी रहे। मंत्रिपद पर रहते समय और उसको छोड़ते समय भी आप पूर्ववत् सादगीपूर्ण जीवन बिताते हुए भूमिहीन, सम्पत्तिहीन बने रहे, यह विशेष बात माननी चाहिए।

विनोबाजी का गोपालराव से अलौकिक स्नेह-सम्बन्ध था। चांडिल में जब विनोबा बहुत बीमार थे, तब जिन मित्रों को उन्होंने उत्कटतापूर्वक स्मरण किया, उनमें से एक गोपालराव थे। गोपालराव की तीव्र अस्वस्थता का समाचार जब निःस्वप्न निद्रा का अनुभव करनेवाले विनोबाजी ने सुना, तब उन्होंने स्वप्न में देखा कि गोपालराव की सेवा-शुश्रूषा में स्वयं लगे हैं। विनोबाजी ने सोचा कि अपना स्नेह अब प्रत्यक्ष सेवा की माँग कर रहा है। यह सब बताते समय विनोबाजी की आँखों में आँसू झलक रहे थे। अपनी भावनाओं को मुश्किल से रोकते हुए विनोबाजी ने कहा: '...लेकिन मैं ठहरा हठाग्रही, मुझे तो ग्रामदान के अलावा दूसरा कुछ सूझता ही नहीं!'

विनोबाजी के बाल-मित्रों की मणिमाला से यह दूसरा मणि टूट गया! पहले भाई धोत्रे चल बसे और अब गोपालराव काले! उनकी दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं। उनकी चरणों में हमारी विनम्र श्रद्धांजलि!

सम्पादक के नाम चिट्ठी

जिलादान-समारोह

बिहार के १७ जिलों में से १० जिलों का जिलादान सम्पन्न हो चुका है। शेष जिलों में जिस तेजी से काम हो रहा है, उसे देखकर आशा बँधती है कि वहाँ भी शीघ्र ही जिलादान सम्पन्न हो जानेवाला है। अब तक जिलादान पूरा हो जाने पर आयोजकों की तमन्ना रही है कि जिलादान-घोषणा एवं समर्पण-समारोह यथासंभव विनोबाजी की उपस्थिति में किया जाय। यह स्वाभाविक भी है।

पर ध्यान देने की बात यह है कि आज से तीन वर्ष पूर्व बाबा ने सूक्ष्म में प्रवेश किया। इसमें संदेह नहीं कि अब तक भूदान से लेकर राज्यदान तक की कल्पना एवं प्रेरणा उन्हींसे मिलती रही है। वे न सिर्फ जीवन-काल में, पर बाद में भी प्रेरणा के स्रोत बने रहेंगे। पर उनके सूक्ष्म-प्रवेश का संकेत यदि यह है कि कार्यकर्ताओं को काम को केन्द्र में रख चिन्तन करना चाहिए तो अब आगे से जिलादान-घोषणा एवं समर्पण-समारोह बाबा की उपस्थिति के आग्रह से मुक्त होकर करना चाहिए।

सर्व सेवा संघ ने ग्राम-स्वराज्य समिति का निर्माण किया है। मेरा सुझाव यह है कि आगे से जिलादान-घोषणा समारोह के साथ उस जिले के हर प्रखण्ड के तीन से पाँच वैसे व्यक्तियों का तीन दिन का शिविर होना चाहिए, जो आगे पुष्टि एवं अन्य कार्यों में अभिक्रम लें। इस शिविर में ग्राम-स्वराज्य समिति के संयोजक या अन्य प्रमुख विचारक उपस्थित रहें। जिलादान-घोषणा समारोह की सभा होने तक अगले एक साल की पूरी कार्य-योजना बन जाय। इस तरह अब तक जिलादान के बाद जो मामला ठंढा दिखाई पड़ रहा है, वह भी मिटेगा, जिलों को अगले कदम की रूपरेखा तैयार मिलेगी और बाबा के सूक्ष्म-प्रवेश का भी निर्वाह होगा।

अगले कदम के निर्धारण में जहाँ कहीं भी दिग्भ्रम की शंका होगी, उनके मार्गदर्शन के लिए बाबा का 'चैम्बर प्रैक्टिस' खुला हुआ मिलेगा ही। इस तरह जहाँ आन्दोलन अपना मार्ग और गति कार्यकर्ताओं से स्वयं निर्धारित करायेगा, वहाँ कार्यकर्तागण आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ेंगे।

—हेमनाथ सिंह

सम्पादकीय

मास्को-सम्मेलन

रूस ने किस उद्देश्य से अंतरराष्ट्रीय कम्यूनिस्ट सम्मेलन बुलाया था, और वह उद्देश्य कहाँ तक सफल हुआ यह तो वही जाने। बाकी दुनिया अनुमान लगा रही है, और लगाती रहेगी। हाँ, साम्यवाद को मिला श्रेय कितना रूस का माना जायगा, और कितना चीन का यह दूसरी बात है। मास्को-सम्मेलन में चीन और उसकी साथी एशियाई कम्यूनिस्ट पार्टियाँ शरीक नहीं हुईं। यह इस बात का पक्का प्रमाण है कि अंतरराष्ट्रीय कम्यूनिस्ट दीवाल में दरार पड़ गयी है —स्थायी दरार। आलोचकों का यह कहना भी बहुत कुछ सही है कि अंतरराष्ट्रीय साम्यवाद अब "राष्ट्रीय" हो गया है। मनुष्य का "कबीला-दिमाग" (ट्राइबल माइंड) बहुत कोशिश करता है तो राष्ट्रीय हो पाता है। और, वह "राष्ट्रीय दिमाग" (नेशनल माइंड) भी आक्रमण, प्रतिरक्षा, व्यापार और शोषण में जितना प्रकट होता है उतना दूसरी चीजों में नहीं। राष्ट्रीय दिमाग कब ऊँचा उठकर विश्व-दिमाग (वर्ल्ड माइंड) बनेगा, यह कहना कठिन है। इसलिए दुनिया के संदर्भ में साम्यवाद का राष्ट्रीय हो जाना आश्चर्य की बात नहीं है। लेकिन राष्ट्रवाद और साम्यवाद का मेल कितना जबरदस्त हो सकता है, इसका दृश्य दुनिया ने वियतनाम में देख लिया। कहाँ अमेरिका और कहाँ विएतनाम! विएतनाम ने साम्राज्य-विरोधी प्रतिकार की ऐसी मिसाल पेश की कि इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ गया।

साम्यवाद स्वयं राष्ट्रीय हो गया है या राष्ट्र-चेतना साम्यवाद की ओर मुड़ रही है, यह विवाद और मतभेद का विषय हो सकता है। लेकिन एक बात साफ दिखाई देती है: वह यह कि पश्चिम के साम्यवाद से पूरब का साम्यवाद अलग विकसित हो रहा है, जिसका अगुआ है चीन। एशिया की समस्याएँ अलग हैं, इसलिए उसकी मुक्ति की दिशाएँ भी अलग होंगी; संगठन अलग होगा, रचना अलग होगी। हो सकता है अफरीका और दक्षिण अमेरिका भी आगे एशिया के ही साथ चलने का निर्णय करें। इन तीनों विशाल भूभागों के सामने जो सवाल हैं उनमें समानता है। बुद्धिमानी की बात यही होगी कि इन तीनों महाद्वीपों के देश साथ चलें, किन्तु उस एकता के आने में देर है। जितनी देर होगी उतनी ही इन देशों की मुसीबत बढ़ेगी।

एशिया और अफरीका के करोड़ों-करोड़ लोग पश्चिम के सताये हुए लोग हैं। पश्चिम का साम्राज्यवाद, उसका वर्णवाद, और पूँजीवाद, यह त्रिविध नागफाँस है जिसने हमें जकड़ रखा है। भारत-जैसे कई देशों को पिछले वर्षों में स्वतंत्रता तो मिली, किन्तु जो साम्राज्यवाद सरकार से निकला वह भेष बदलकर, बाजार के रास्ते फिर घुस आया। हम दमित हैं, शोषित हैं, काले हैं—कम-से-कम गोरे तो नहीं हैं—इस नाते हमें हर मोर्चे पर अपनी मुक्ति की लड़ाई जारी रखनी है। लड़ाई का नेतृत्व किसके हाथ में है? साम्यवाद के सिवाय दूसरा कोई समर्थ हाथ दिखाई नहीं देता।

मुक्ति के इस महाअभियान की अगुआई कहीं चीन करे, या कहीं रूस करे, लेकिन साम्यवाद के सिवाय दूसरी कौनसी शक्ति है जो पश्चिम की जालिम शक्तियों के मुकाबिले खड़ी होगी? मास्को-सम्मेलन में जो निवेदन स्वीकृत हुआ है उसमें सबसे जोरदार ललकार साम्राज्यवाद के खिलाफ है। साम्राज्यवादी-वर्णवादी-पूँजीवादी-शस्त्रवादी सत्ता का सामना अगर राष्ट्रवाद को शस्त्र से ही करना है तो युद्ध की व्यूह रचना और साधन-सम्पन्नता साम्यवाद के सिवाय दूसरे किसीके पास नहीं है। इतना श्रेय पाने का साम्यवाद को अधिकार है, और उसे मिल भी रहा है। रूस और चीन का अलग-अलग श्रेय साम्यवाद का सम्मिलित श्रेय है।

रचना की दृष्टि से खेतिहर साम्यवाद औद्योगिक साम्यवाद से भिन्न होगा, यह इतिहास के विकास-क्रम में अनिवार्य था। चीन और रूस में दूसरे झगड़े न भी होते तो रचना में कुछ मौलिक भेद तो होते ही। एक देश की पद्धति वह साम्यवादी हो या कोई दूसरी—जैसी-की-तैसी दूसरे देश में लागू नहीं हो सकती। हर देश साम्य का अपना ढाँचा अलग निकालेगा, और निकाल भी रहा है।

दुर्भाग्य की एक बात है। विदेशी दमन और शोषण के शिकार एशियाई और अफरीकी देश अपनी मुक्ति का अलग रास्ता नहीं निकाल पा रहे हैं। वे यह नहीं सोच पा रहे हैं कि एक सत्ता से मुक्त होने के लिए वे दूसरी सत्ता की मदद ले रहे हैं, या विकास के लिए एक पूँजी की जगह दूसरी पूँजी माँग रहे हैं, तो गुलामी बदलने का जोखिम उठा रहे हैं। साम्यवादी देशों की अपनी लिप्सा तो है ही, लेकिन हमारी यह विवशता साम्यवादियों को साम्राज्यवादी बनने में मदद कर रही है। अहिंसक प्रतिकार का रास्ता खुल तो गया है, लेकिन अभी उसके अनुरूप नेतृत्व और संगठन नहीं विकसित हुआ है। हाल के नये स्वतंत्र देशों में जो नेतृत्व सामने आया है वह पुराने रास्ते का यात्री है। उसकी दीक्षा साम्राज्यवाद के तत्वावधान में पूँजीवाद और शस्त्रवाद में ही हुई है। वह नागरिक की मुक्ति के अभियान का झंडा हाथ में नहीं ले सकता; लेना चाहता भी नहीं। इसीलिए एशिया और अफरीका का नागरिक नेता को छोड़कर सैनिक की शरण में जा रहा है।

एक दूसरी बात भी है। एक ओर साम्यवाद बाहरी साम्राज्यवाद के विरुद्ध मुक्ति की अगुआई करता दीखाई देता है, और दूसरी ओर राष्ट्र के भीतरी मोर्चे पर वह ऐसे काँटे बो रहा है जो राष्ट्र की शक्ति को खंडित कर रहे हैं। भारत तथा कई अन्य देशों में वर्ग-संघर्ष गृहयुद्ध का पूर्वाभ्यास सिद्ध हो रहा है। साम्यवादी लोकतांत्रिक शक्तियों के संगठित मोर्चे की बात तो बोलते हैं, लेकिन राइट-लेफ्ट राजनीति की उनकी भूमिका, संघर्ष की उनकी प्रकृति, और सत्ता की प्रतिद्वन्द्विता के कारण वे समाज की शक्ति तोड़ते अधिक हैं, बनाते कम। भारत में मुस्लिम साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देने, और वर्ग-संघर्ष के नाम में एक वर्ग को दुश्मन बनाने की उनकी जो नीति है—या जो रीति है—वह हमें कमजोर कर रही→

हमें आजाद गाँवों का आजाद देश बनाना है !

पुरानी बात है ३०० साल पहले की—ईस्ट इण्डिया कम्पनी के लोग बंगाल में आ गये, और वहाँ पर उनके नौकरों ने हर गाँव का सर्वे किया। बड़ी आश्चर्य की बात है। उस जमाने में इग्लैण्ड से हिन्दुस्तान का बारह हजार मील का चक्कर था और आज के साधन तो उन दिनों थे नहीं। वहाँ आकर व्यापार शुरू किया। और वह सर्वे सारा लिख रखा विस्तार से और उसकी किताबें प्रकाशित हो गयी हैं। उनमें से कुछ बाबा को देखने को मिली थीं। बिलकुल छोटे-छोटे गाँवों में वे लोग गये हुए थे। उनके रेकार्ड में लिखा हुआ है कि बंगाल में हर ४०० मनुष्यों के पीछे एक स्कूल है। मैं अपने मन में सोचता था कि ४०० मनुष्यों के पीछे एक स्कूल, यानी लगभग हर गाँव में स्कूल थे। प्रति ४०० व्यक्ति के पीछे एक स्कूल। हम समझते हैं कि भारत में अंग्रेजों ने व्यापक तालीम शुरू की। और उसके पहले हमारे सब लोग निरक्षर थे और थोड़े साक्षर थे—ब्राह्मण या वैश्य। लेकिन अंग्रेज यहाँ आये और चले गये। उस बीच १५० साल राज किया। उन १५० सालों में १०–१२ फीसदी लोगों को तालीम मिली। १०० मनुष्यों में से ८८ मनुष्य अशिक्षित थे और १०–१२ शिक्षित। अभी हम लगभग ३० प्रतिशत के नजदीक आ गये हैं। लेकिन ईस्ट इण्डिया कम्पनी के जमाने में हर ४०० मनुष्यों के पीछे एक मदरसा या एक पाठशाला थी, अर्थात् उस जमाने की विद्या के लिए थोड़ा अरबी का या संस्कृत का ज्ञान जरूरी था। यानी अक्षरज्ञान के बाद ही यह होता होगा।

यह ठीक है कि शिक्षा की पद्धति पुरानी थी। उस जमाने की जो पद्धति थी उसमें शिक्षा मिलती थी। लेकिन उस समय भारत निरक्षर था, यह गलत है। अलावा इसके, महाराष्ट्र में तो विद्यार्थियों को और तीन-चार बातें सीखनी पड़ती थीं: घोड़े पर बैठना, तैरना, पेड़ों पर चढ़ना-उतरना—ये चार बातें हर एक को सिखायी जाती थीं; अर्थात् यह विद्या क्रियाशील विद्या थी। उसके अलावा अपनी खेती-बारी तो थी ही।

उस जमाने में लोग अशिक्षित नहीं थे। अशिक्षित बनते गये अंग्रेजों के जमाने में। उन्होंने विद्या के दो टुकड़े कर दिये। एक सामान्य विद्या और एक ऊँची विद्या—हाय

विनोबा

स्कूल। हायस्कूल यानी अंग्रेजी। कुछ लोगों को अंग्रेजी सिखाया और बाकी तमाम लोगों को कुछ नहीं। जो सीखते थे वे विद्वान माने गये और जो नहीं सीखते थे वे अक्षरशत्रु। अकसर जो अंग्रेजी सीखते थे, वे ब्राह्मण वगैरह थे। तो उनकी दुहरी क्षमता (डबल कैपसिटी) हुई। ऐसे भी, पुरानी पद्धति के अनुसार ये वर्ग श्रेष्ठ माने जाते थे, और अब अंग्रेजी सीखे, इसलिए श्रेष्ठ माने जाने लगे। तो समाज के बिलकुल टुकड़े हो गये। इस तरह समाज को विभाजित करना पाप माना जायगा। वे दो टुकड़े आज तक जुड़े नहीं। यह कहानी मैं इसलिए कह रहा था, कि ध्यान में आये कि उस जमाने में भारत में शिक्षकों का दर्जा क्या था।

गाँव-गाँव में ग्रामपंचायतें थीं। उनकी प्रवृत्तियों में एक प्रवृत्ति थी स्कूल चलाने की। दूसरा न्याय, तीसरा व्यवस्था करना आदि, ये प्रवृत्तियाँ थीं। और गाँव में जितने काम चलते थे, उनके लिए थोड़ा-थोड़ा हिस्सा हर किसान से मिलता था। बहुत बड़ी ग्रामीण योजना थी। जमीन व्यक्तिगत नहीं थी। हमारे शास्त्रों में—जैमिनी के मीमांसा शास्त्र में स्पष्ट दिया है कि जमीन की मिलकियत भगवान की है, जो खेती करेगा उसकी है, राजा की नहीं। तो ग्रामपंचायत की व्यवस्था में एक यह बात थी कि फसल आयेगी, तो उस पर सबका हक है। जितने उद्योग थे—वैद्य, बढ़ई, कुम्हार, चमार, बुनकर आदि, उन सबकी सेवाएँ गाँव की मानी गयीं। सालभर में जो फसल आयेगी उसका एक हिस्सा हर घर से बढ़ई को मिलता था, एक कुम्हार को मिलता था, एक चमार को मिलता था। इस तरह सबके हिस्से बाँटे गये थे और गाँव की फसल पर सबका हक था। आज पैसे से काम होता है। उस समय फसल का हिस्सा बाँटा हुआ था, हर कोई हर घर को सालभर सेवाएँ देता था। जितने ग्रामोद्योग करनेवाले थे, वे गाँव के सेवक थे, किसी घर के नौकर नहीं। गाँव में वैद्य रहता था। किसी घर में कोई बीमार हुआ, तो मुफ्त दवा देता था। गाँव में वनस्पति का बगीचा रहता था। वहाँ से उसको दवाएँ मिलती थीं। उस बगीचे की देखभाल ग्रामपंचायत करती थी। और वैद्य को हर घर से फसल का एक हिस्सा मिलता था। यानी वैद्य की एक सेवा हुई गाँव की। आज का वैद्य मुलाकात की फीस के बिना दवा देगा नहीं। यह सारी व्यवस्था

→है, और देश को एक ऐसी स्थिति में ढकेल रही है जहाँ वह अपने को एक राष्ट्र की हैसियत से संभाल नहीं सकेगा। विश्व-साम्राज्यवाद के विरुद्ध बिगुल बजाकर भारत-जैसे बड़े राष्ट्र की शक्ति को खण्डित करना कितना विवेकशून्य होगा? क्या इस बात को साम्यवादी समझ नहीं रहा है? क्या उसे इस सम्भावना पर विचार नहीं करना चाहिए कि भारत आज भी शांति और क्रान्ति का साथ-साथ नमूना बनकर एशिया और अफरीका के ही नहीं, दुनिया के इतिहास को एक नया मोड़ दे सकता है।

कुछ इन्हीं बातों से मन में शंका होती है कि साम्यवाद सचमुच साम्राज्यवाद का अंत चाहता है, अथवा एक के बाद दूसरे देश पर चीन या रूस की प्रभुसत्ता कायम कर एक नये साम्राज्यवाद की स्थापना चाहता है जिसमें रूस और चीन प्रतिद्वंद्वी बन गये हैं?

अगर यही बात है तो कैसे होगी क्रान्ति, और कैसे पूरा होगा मुक्ति का वादा? मास्को-सम्मेलन ने रूस के दस्तावेज पर सिर्फ दस्तखत किया, इतिहास के संकेत को नहीं पहचाना।

साम्यवाद का 'वाद' अपने ही विवादों में फँसता जा रहा है। भविष्य की पूँजी उसके हाथ से निकलती दिखाई देती है। मास्को-सम्मेलन से साम्यवाद को नयी दृष्टि और नयी शक्ति क्या मिली? वह मिलेगी तब जब साम्यवादी 'वाद' का आग्रह छोड़कर 'साम्य' की बात सोचना शुरू करेगा।•

देखने की जिम्मेवारी ग्रामपंचायत की थी। इसका थोड़ा वर्णन डाक्टर एनी बेसेण्ट की किताब में पढ़ने को मिलेगा।

ग्रामपंचायत की योजना आज के जैसी नहीं थी। गाँव को समझाकर योजना की जाती थी। यानी गाँव के सुख-दुःख में उसका बँटवारा था। आज गाँव के सुख-दुःख में उसका बँटवारा नहीं और ग्रामपंचायत के सुख-दुःख में गाँव का बँटवारा नहीं। यानी गाँव के टुकड़े पड़ गये और गाँव का परिवार छिन्न-विछिन्न हो गया। हिन्दुस्तान की ग्रामसंस्था तोड़ने का काम अंग्रेजों ने किया और उसमें वे सफल हुए। उसके पहले भारत पर अनेकों ने हमला किया, लुटा, लेकिन ग्रामपंचायत टूटी नहीं। और ग्रामपंचायत तोड़ने का श्रेय अंग्रेजों को मिला। उन्होंने गाँव का सर्वे इसलिए किया कि गाँव में क्या कच्चा माल होगा यह देखकर अपने देश में भेजना और वहाँ से पक्का माल लाना, इस तरह अपना व्यापार बढ़ाना चाहते थे। उससे गाँव के उद्योग खतम हुए। केवल कच्चा माल बनानेवाले गाँव रहे। उद्योग खतम हुए और पैसा चाहिए, इसलिए जमीन बेचने का क्रम शुरू हुआ। जमीन दौलत हुई, मालिकी हक शुरू हुआ। यह सारा अंग्रेजों के बाद हुआ।

देश का स्वराज्य आया और गाँव का नहीं आया। हमारा गुलाम गाँवों का बना हुआ आजाद देश है। उसके पहले—अंग्रेजों के आने के पहले आजाद गाँवों का आजाद देश था। मुगलों के जमाने में आजाद गाँवों का गुलाम देश था। अंग्रेजों के जमाने में गुलाम गाँवों का गुलाम देश बना। और स्वराज्य के बाद गुलाम गाँवों का आजाद देश है। अब हमें फिर से वही स्थिति लानी है—आजाद गाँवों का आजाद देश।

(हजारीबाग : दि० ६-५-'६९, जिले के सरकारी अधिकारियों के बीच)

पठनीय **नयी तालीम** मननीय
शैक्षिक क्रान्ति की अग्रदूत मासिकी
वार्षिक मूल्य : ६ रु०
सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी-१

महामुनि कार्ल मार्क्स ने लिखा है :

ग्राम-समुदायों की प्राचीन व्यवस्था : भारत के इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय

हिन्दुस्तान के वे छोटे-छोटे तथा अत्यन्त प्राचीन ग्राम-समुदाय, जिनमें से कुछ आज तक कायम हैं, जमीन पर सामूहिक स्वामित्व, खेती तथा दस्तकारी के मिलाप और एक ऐसे श्रम-विभाजन पर आधारित हैं, जो कभी नहीं बदलता, और जो जब कभी एक नया ग्राम-समुदाय प्रारम्भ किया जाता है, तो पहले से बनी-बनायी और तैयार योजना के रूप में काम में आता है। सौ से लेकर कई हजार एकड़ तक के रकबे में फैले हुए इन ग्राम-समुदायों में से प्रत्येक एक गठी हुई इकाई होती है, जो अपनी जरूरत की सभी चीजें पैदा कर लेती है। पैदावार का मुख्य भाग सीधे तौर पर समुदाय के ही उपयोग में आता है, और वह माल का रूप धारण नहीं करता। इसलिए यहाँ पर उत्पादन उस श्रम-विभाजन से स्वतंत्र होता है, जो मालों के विनिमय ने मोटे तौर पर पूरे हिन्दुस्तानी समाज में चालू कर दिया है। केवल अतिरिक्त पैदावार ही माल बनती है, और यहाँ तक कि उसका भी एक हिस्सा उस वक्त तक माल नहीं बनता, जब तक कि वह राज्य के हाथों में नहीं पहुँच जाता। अत्यन्त प्राचीन काल से ही यह रीति चली आ रही है कि इस पैदावार का एक निश्चित भाग सदा जिन्स की शकल में दिये जानेवाले लगान के तौर पर राज्य के पास पहुँच जाता है।

हिन्दुस्तान के अलग-अलग हिस्सों में इन समुदायों का विधान अलग-अलग ढंग का है। जिनका सबसे सरल विधान है, उन समुदायों में जमीन को सब मिलकर जोतते हैं और पैदावार सदस्यों के बीच बाँट ली जाती है। इसके साथ-साथ हर कुटुम्ब में सहायक धन्धों के रूप में कताई और बुनाई होती है। इस प्रकार, उन आम लोगों के साथ-साथ, जो सदा एक ही प्रकार के काम में लगे रहते हैं, एक 'मुखिया' होता है, जो जज, पुलिस और वसूलदार का काम एक साथ करता है, एक पटवारी होता है, जो खेती-बारी का हिसाब रखता है और उसके बारे में हर बात अपने कागजों में दर्ज करता जाता है, एक और कर्मचारी होता है, जो अपराधियों पर मुकदमा चलाता है, अजनबी मुसाफिरों की हिफाजत करता है और उनको अगले गाँव तक सकुशल पहुँचा आता है, पहरेदार होता है, जो पड़ोस के समुदायों से सरहद की रक्षा करता है, आबपाशी का हाकिम होता है, जो सिंचाई के लिए पंचायती तालाबों से पानी बाँटता है, ब्राह्मण होता है, जो धार्मिक अनुष्ठान कराता है, पाठशाला का पंडित होता है, जो बच्चों को बालू पर लिखना-पढ़ना सिखाता है, पंचांगवाला ब्राह्मण या ज्योतिषी होता है, जो बोआई और कटाई और खेत के अन्य हर काम के लिए मुहूरत विचारता है, एक लोहार और एक बढ़ई होते हैं, जो खेती के तमाम औजार बनाते हैं और उनकी मरम्मत करते हैं, कुम्हार होता है, जो सारे गाँव के लिए बर्तन-भांडे तैयार करता है, नाई होता है, धोबी होता है, जो कपड़े धोता है, सुनार होता है और कहीं-कहीं पर कवि भी होता है, जो कुछ समुदायों में सुनार का और कुछ में पाठशाला के पंडित का स्थान ले लेता है। इन एक दर्जन व्यक्तियों की जीविका पूरे समुदाय के सहारे चलती है। अगर आबादी बढ़ जाती है, तो खाली पड़ी जमीन पर पुराने समुदाय के ढाँचे के मुताबिक एक नये समुदाय की नींव डाल दी जाती है। पूरे ढाँचे से एक सुनियोजित श्रम-विभाजन का प्रमाण मिलता है। किन्तु इस प्रकार का विभाजन हस्तनिर्माण में असम्भव होता है, क्योंकि यहाँ तो लोहार और बढ़ई आदि के सामने एक मण्डी होती है, जो कभी नहीं बदलती, और अधिक-से-अधिक केवल यह अन्तर होता है कि गाँवों के आकार के अनुसार एक के बजाय दो-दो या तीन-तीन लोहार और बढ़ई आदि हो जाते हैं।

ग्राम-समुदाय में जिस नियम के अनुसार श्रम-विभाजन का नियमन होता है, वह एक प्राकृतिक नियम की भाँति काम करता है, जिसके आड़े कोई नहीं आ सकता, और साथ

ही हर अलग-अलग कारीगर—जैसे लोहार, बढ़ई आदि—अपनी वर्कशाप (कर्मशाला) में अपनी दस्तकारी की सारी क्रियाएँ परम्परागत ढंग से, किन्तु स्वतंत्र रूप से करता चलता है और अपने ऊपर किसी अन्य व्यक्ति का प्राधिकार नहीं मानता। इन आत्म-निर्भर ग्राम-समुदायों में, जो लगातार एक ही रूप के समुदायों में पुनः प्रकट होते रहते हैं, और जब अकस्मात बरबाद हो जाते हैं, तो उसी स्थान पर और उसी नाम से फिर खड़े हो जाते हैं,*—इन ग्राम-समुदायों में उत्पादन का संगठन बहुत ही सरल ढंग का होता है, और उसकी यह सरलता ही एशियाई समाजों की अपरिवर्तनशीलता की कुंजी है, उस अपरिवर्तनशीलता की, जिसके बिलकुल विपरीत एशियाई राज्य सदा बिगड़ते और बनते रहते हैं और राजवंशों में होनेवाले परिवर्तन तो मानो कभी रुकते ही नहीं। राजनीति के आकाश में जो तूफानी बादल उठते हैं, वे समाज के आर्थिक तत्वों के ढाँचे को नहीं छू पाते। —कार्ल मार्क्स

("पूँजी" : पृष्ठ-संख्या : ४०४, ४०५)

* "इस देश के निवासी अत्यंत प्राचीन काल से...इस सरल रूप के अन्तर्गत रह रहे हैं। गाँवों की सीमाओं में कभी-कभार ही कोई परिवर्तन होता है, और यद्यपि खुद इन गाँवों को कभी-कभी युद्ध, अकाल तथा महामारी से हानि पहुँचती है और यहाँ तक कि वे तबाह भी हो गये हैं, परन्तु गाँव का वही नाम, वे ही सीमाएँ, वे ही हित और यहाँ तक कि वे ही कुटुम्ब भी सदियों तक चलते गये हैं। उनके निवासी राज्यों के छिन्न-भिन्न हो जाने और बँट जाने से कभी परेशान नहीं होते, जब तक गाँव पूरा कायम रहता है तब तक उन्हें इस बात की कोई चिंता नहीं होती कि उनका गाँव किस राज्य को सौंप दिया गया है या किस राजा के अधिकार में पहुँच गया है, गाँव की अन्दरूनी अर्थ व्यवस्था ज्यों-की-त्यों रहती है।"

(Th. Stamford Raffles, जावा के भूतपूर्व लेफ्टिनेंट जनरल, "The History of Java" ['जावा का इतिहास'], London, 1817, खण्ड १, पृ० २८५।)०

भूदान-आन्दोलन के समाचार

फर्रुखाबाद में ६४७ ग्रामदान

जिलादान का काम पूरा करने के लिए शीघ्र ही पूरक-अभियान चलाने की योजना

प्राप्त सूचनाओं के अनुसार फर्रुखाबाद जिले में जिलादान-प्राप्ति का जो अभियान पूरे जिले में एकसाथ चलाया गया था, उसमें ६४७ नये ग्रामदान प्राप्त हुए। जिलादान के लक्ष्य तक पहुँचने में जो कसर रह गयी है, उसे पूरा करने के लिए शीघ्र ही एक दूसरा पूरक अभियान चलाया जानेवाला है।०

शमसाबाद (आगरा) में जिला-सर्वोदय-सम्मेलन

दिनांक २६, २७ जून '६९ को जिले के प्रथम प्रखंडदानी क्षेत्र शमसाबाद में जिला-सर्वोदय-सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन में पूरे क्षेत्र को ग्रामस्वराज्य की दिशा में आगे ले जानेवाले कार्यक्रमों पर विचार-विमर्श हुआ।०

इटावा (राजस्थान) पंचायत में १८ ग्रामदान

इटावा, डाक से। यहाँ पिछले दिनों जो ६ दिन का ग्रामदान-अभियान चला, उसमें १८ गाँवों के ग्रामदान प्राप्त हुए। इन ग्रामदानों में इटावा व गैंता-जैसे बड़े गाँव भी हैं। इटावा पंचायत समिति का प्रधान कार्यालय है, आबादी करीब ३५००, परिवार ४९६; जिनमें से ४१४ परिवारों ने ग्रामदान को अपनी सहमति प्रदान कर दी। गैंता ४३० परिवारों का बड़ा गाँव है, जिनमें से ३६६ परिवार मुखियाओं ने ग्रामदान-पत्रक पर हस्ताक्षर कर दिये। इस ग्रामदान-अभियान में केवल १३ कार्यकर्ता शामिल हुए थे, १० स्थानीय लोग थे, जिनमें ग्रामसेवक, अध्यापक आदि थे। अभियान की शुरुआत दो दिन के शिविर से हुई। शिविर स्थानीय हायर सेकेण्डरी स्कूल में श्री बद्रीप्रसादजी स्वामी के मार्गदर्शन में चला। श्री गोकुलभाई भट्ट ने भी शिविरार्थियों को संबोधित किया।०

इंदौर में राष्ट्रीय परिसंवाद

वाराणसी, १६ जून। ज्ञात हुआ है कि भारत के नगरों में सर्वोदय-आन्दोलन के व्यापक प्रवेश के लिए ९ से ११ सितम्बर, '६९ तक इन्दौर में राष्ट्रीय स्तर का परिसंवाद आयोजित किया जायगा। इस परिसंवाद में श्री जयप्रकाश नारायण और श्री सिद्धराज ढड्ढा विशेष रूप से भाग लेंगे। (सप्रेस)

गांधी-शताब्दी पदयात्रा

२ अक्तूबर '६८ से प्रारम्भ इतिहास-प्रसिद्ध दाण्डी से पोरबन्दर तक की ग्राम-स्वराज्य पदयात्रा-टोली सुरेन्द्रनगर जिले की यात्रा पूरी कर अब भावनगर जिले में प्रवेश कर चुकी है।

सुरेन्द्रनगर जिले के ६ तालुकों में २१ दिन तक १४३ मील की पदयात्रा हुई। इस बीच ४७० रुपये का सर्वोदय-साहित्य बिका, 'भूमिपुत्र' के १०६ ग्राहक बने और ५८ सभा-सम्मेलन हुए।

भारतीय इतिहास का
एक दुःखद अध्याय है
बंगाल का अकाल
(सन् १९४३)

तब गांधीजी ने कहा था कि :
'अगर देश में नयी तालीम होती, तो यह अकाल न होता!'

आज तो भारत बहुविध खतरनाक और दुःखद समस्याओं से उलझा हुआ है। तो, क्या यह कहा जा सकता है कि : इन समस्याओं को सुलझाने और भारत की गाड़ी को विकास की मंजिल की ओर खींचने की शक्ति नयी तालीम में है?

शुलाई में प्रकाशित हो रहे 'नयी तालीम' (मासिक) में यही समस्यामूलक चिंतन प्रस्तुत हो रहा है। अगर आप अभी तक उसके पाठक नहीं बने हों, तो तुरन्त बन जायँ।

वार्षिक शुल्क : ६ रुपये
सर्व सेवा संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी—१

www.vinoba.in

तत्त्वज्ञान

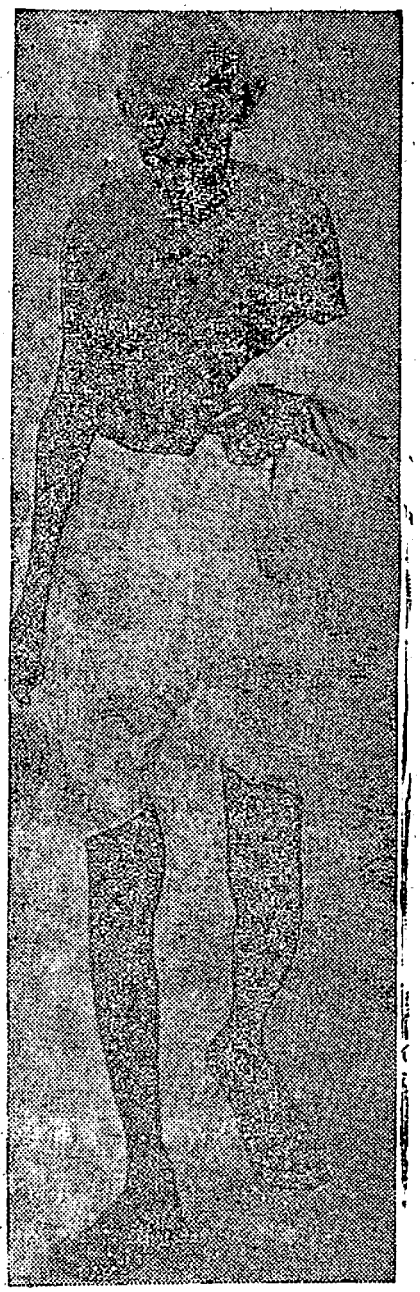

भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को दी गयी फांसी तथा गणेश शंकर विद्यार्थी के आत्म-बलिदान के प्रसंगों से क्षुब्ध कराची-कांग्रेस-अधिवेशन के लोगों को सम्बोधित करते हुए २६ मार्च १९३१ को गांधीजी ने कहा था :—

"जो तरुण यह ईमानदारी से समझते हैं कि मैं हिन्दुस्तान का नुकसान कर रहा हूं, उन्हें अधिकार है कि वे यह बात संसार के सामने चिल्ला-चिल्लाकर कहें। पर तलवार के तत्त्वज्ञान को हमेशा के लिए तलाक दे देने के कारण मेरे पास अब केवल प्रेम का ही प्याला बचा है, जो मैं सबको दे रहा हूं। अपने तरुण मित्रों के सामने भी अब मैं यही प्याला पकड़े हुए हूं....।"

उसके बाद का इतिहास साक्षी है कि देश ने तलवार के तत्त्वज्ञान को तलाक देनेवाले गांधी का साथ दिया। साम्राज्य-वाद की नींव हिली, भारत में लोकतंत्र की नींव पड़ी और संसार को मुक्ति का एक नया रास्ता मिला।

संसार आज बन्दूक की नली के तत्त्वज्ञान से और अधिक त्रस्त हुआ है। विनोबा संसार को वही प्रेम का प्याला पिलाकर बन्दूक के तत्त्वज्ञान को तलाक दिलाना चाहता है और देश में सच्चे स्वराज्य की स्थापना के लिए उसने नया रास्ता बताया है।

क्या हम वक्त को पहचानेंगे और महान कार्य में वक्त पर योग देंगे ?

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी-समिति)
हुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैरू, जयपुर–२ राजस्थान द्वारा प्रसारित।

भूदान-यज्ञ www.vinoba ता० ९-'६९ रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नम्बर ५ १७

केरल में भी ग्रामदान-तूफान प्रारम्भ

गांधी-शताब्दी वर्ष में तीन जिलादान प्राप्त करने का संकल्प

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री शं० जगन्नाथन् के पत्रानुसार ११, १२ जून को आयोजित केरल प्रदेश सर्वोदय कार्यकर्ता-सम्मेलन से प्रदेश में ग्रामस्वराज्य के आन्दोलन को एक नयी स्फूर्ति और गति प्राप्त हुई है। सम्मेलन में वरिष्ठ सर्वोदय-नेता श्री शंकरराव देव तथा सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री शं० जगन्नाथन् भी उपस्थित थे।

सम्मेलन से प्राप्त प्रेरणा और स्फूर्ति ने कार्यकर्ताओं ने नयी उमंग पैदा कर दी है, और उन्होंने प्रान्तदान के प्रथम चरण के रूप में गांधी शताब्दी वर्ष के अन्दर तीन जिलों—कालीकट, त्रिवेन्द्रम, अलेप्पी—के ग्रामदान प्राप्त करने का संकल्प किया है। इन जिलों में आगामी ४, ५, और ६ जुलाई को कार्यकर्ता प्रशिक्षण शिविर आयोजित किये जा रहे हैं, उसके बाद अभियान का सिलसिला शुरू होगा।●

आदिवासियों की अलगाव-भावना राष्ट्र के लिए चेतावनी

बिहार ग्रामदान-प्राप्ति संयोजन समिति के सहमंत्री श्री कैलाश प्रसाद ने कैम्प-कार्यालय, रांची से १६ जून के एक पत्र में लिखा है :

"करीब-करीब बिहार के सभी प्रमुख कार्यकर्ता बिहारदान के इस आखिरी अभियान में लग गये हैं। यहाँ आदिवासी नेताओं का सहयोग अभी नहीं मिल पा रहा है, कुछ का विरोध ज्यों-का-त्यों है। कुछ का विरोध घटा है। कुछ प्रखंडों में प्रगति आशाजनक है, कुछ प्रखंडों में कार्यकर्ता लगातार प्रयत्न कर रहे हैं, लेकिन चट्टान अभी खिसक नहीं रही है। इस क्षेत्र (बिहार का छोटा नागपुर डिवीजन, जो मुख्य रूप से आदिवासियों का है) की अपनी अलग समस्याएँ हैं, अलग रीति-रिवाज हैं। यहाँ के मूल निवासी अपने को बिहार प्रदेश का मानते ही नहीं, गैर-आदिवासियों के प्रति काफी घृणा है। ईसाई मिशनरी इस घृणा को बढ़ाने में अभी भी सहयोग करते हैं। इन मिशनरी लोगों ने यद्यपि ग्रामदान की अपील पर हस्ताक्षर कर दिये हैं, किन्तु सक्रिय नहीं हो रहे हैं।"

बिहारदान का लक्ष्य पूरा होने में यह सबसे बड़ी बाधा हमारी इस भूल की ओर संकेत करती है हमारी ही उपेक्षा, तिरस्कार और शोषक प्रवृत्तियों के कारण हमारे देश के ही आदिवासी हमसे किस प्रकार अलगाव महसूस करने लगे हैं। यह एक जबरदस्त चेतावनी है राष्ट्रीय एकता पर विचार करनेवालों के लिए।●

मुरैना जिला ग्रामदान की ओर

मध्य प्रदेश के मुरैना जिले में पिछले गत वर्षों में श्योपुर, सबलगढ़ और विजयपुर तहसीलों में काफी मात्रा में ग्रामदान हो चुके हैं। उनको फिर से ग्रामदान की भावना की ओर बढ़ाने तथा अन्य तहसीलों में नये ग्रामदान प्राप्त करने के लिए मुरैना नगर से गत २० जून '६९ से दो टोलियाँ श्री कामेश्वर बहुगुणा और श्री झुमकलाल दुबे के नायकत्व में निकली हैं, जिनका कार्य बड़ी तेजी से बढ़ रहा है। हाल ही में १९ जून को मुरैना नगर के जी० पी० कालेज में तहसील स्तर के पटवारी, पंचायत-सचिव और अध्यापकों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें लगभग ३०० लोगों ने भाग लिया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता जनसम्पर्क समिति गांधी-जन्म शताब्दी के संगठक श्री ए० एन० राजन् ने की और मुख्य अतिथि के रूप में श्री काशिनाथ त्रिवेदी ने सभी प्रतिनिधियों को उद्बोधित करते हुए ग्रामदान-विचार को बड़े ही सरल शब्दों में समझाया। —गुरुशरण

महाराष्ट्र में जयप्रकाशजी का दौरा

आगामी ८ जुलाई से १४ जुलाई तक जयप्रकाश नारायण ने महाराष्ट्र के पूर्वी क्षेत्र में प्रचार-दौरे के लिए अपना समय दिया है। आप जलगाँव, बुलढाणा, अकोला, अमरावती, यवतमाल, चांदा और नागपुर जिले में दौरा करेंगे। इस दौरे का आयोजन करने की दृष्टि से जलगाँव जिला सर्वोदय मंडल ने एक बैठक में विचार किया। अन्य सभी जिलों में भी पूर्वतैयारी के लिए कार्यकर्ताओं ने स्वागत-समिति का आयोजन किया है। अमरावती और नागपुर जिले ने एक-एक लाख रुपये, यवतमाल जिले ने अड़सठ हजार रुपये की निधि जयप्रकाशजी को अर्पित करने का संकल्प किया है।●

● हर क्रान्तिकारी की पलकों में नये युग का एक सपना पलता है।

● उस नये युग में वर्तमान की घुटन और सड़ाँध से मुक्ति का संदेश होता है।

● उस संदेश को जन-जन में गुञ्जित करके वह क्रान्ति की शक्ति पैदा करता है।

—और महात्मा गांधी एक महान क्रान्तिकारी थे,

—उन्होंने क्रान्ति की ज्ञात अवधारणा में भी क्रान्ति की,

—उनकी आँखों में नये भारत की नयी तस्वीर पली थी,

—उन सपनों को वे छोड़ गये अपनी विरासत के रूप में।

क्या उन सपनों का आज के संदर्भ में कोई महत्त्व है ?

गांधी-शताब्दी वर्ष में कुश्ती-दंगल से लेकर कुर्सी-दंगल तक में लगे देशवासियों को 'भूदान-यज्ञ' गांधी के उन सपनों को याद दिलाना चाहता है !

अपनी प्रति सुरक्षित कराएँ
और
प्रतीक्षा करें २ अक्तूबर '६९ के विशेषांक की !

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०, या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।

"भूदान-यज्ञ" ३० जून, '६९ के अंक का परिशिष्ट

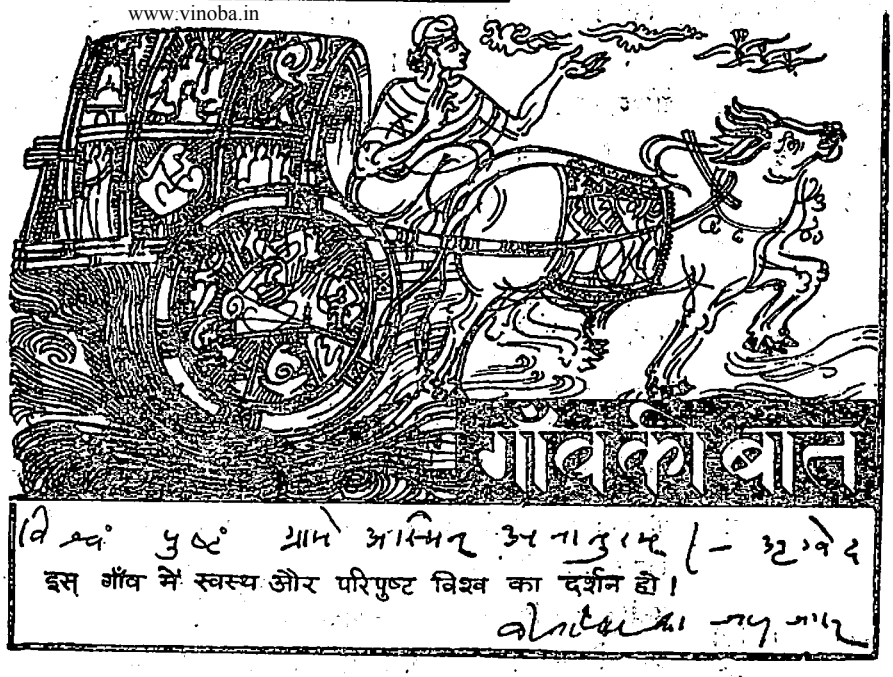

www.vinoba.in

विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन् अनातुरम् । – ऋग्वेद

इस गाँव में स्वस्थ और परिपुष्ट विश्व का दर्शन हो।

विनोबा का जय जगत्

इस अंक में

मेरा क्या है ?

ग्रामदान के बाद हमने क्या किया ?

ग्राम-शान्ति-सेना

मर्दानी ही नहीं, लुभावनी भी !

कूड़े-कचरे से खाद बनायें–२

वैभव की फैलती दुनिया और टूटता-बिखरता आदमी

३० जून, '६९

वर्ष ३, अंक २२]   [१८ पैसे

गाँव की मुक्ति

मेरा क्या है ?

"चीन से लड़ने जाओगे ?"

"नहीं मालिक, मैं नहीं जाऊँगा।"

"क्यों नहीं ? देश के लिए तुम-जैसा जवान नहीं लड़ेगा ? सोचो।"

"देश के लिए वह लड़े जिसका देश में कुछ हो। नेता लोग, हाकिम लोग, मालिक लोग ..."

"क्यों, क्या यह देश तुम्हारा नहीं है ? कैसी बात कर रहे हो ?"

"मेरा इस देश में क्या है मालिक ? न घर, न दुआर, न एक कट्ठा जमीन !"

"कुछ भी हो, देश तो अपना है। चीन ने हमारे देश पर हमला किया है, जानते हो ?"

"हाँ, सुना है। लेकिन चीनवाला आयेगा तो हमारा क्या लेगा ?"

"सब दखल कर लेगा।"

"दखल कर लेगा तो क्या मजूरी नहीं करायेगा ? सुना है वह मजूरों को बहुत मानता है, और उसके राज में हम लोगों को जमीन मिलेगी, और जंगल में लकड़ी काटने के लिए दस पैसा रोज चौकीदार को नहीं देना पड़ेगा।"

बातें मैंने इसके आगे भी कीं, लेकिन उसे किसी तरह समझा नहीं सका कि देश जैसे किसी दूसरे का है उसी तरह उसका भी है। वह बराबर यही कहता रहा : "मेरा क्या है ? जब मेहनत-मजूरी से ही पेट भरना है तो जैसा एक मालिक, वैसा दूसरा मालिक।"

मुन्नर हट्टा-कट्टा, साँवले रंग का जवान था। उम्र अभी तीस की नहीं रही होगी, खड़गपुर के पास पहाड़ के इसी ओर उसका गाँव था। मुन्नर आदिवासी था। वहाँ आस-पास आदिवासियों के कई गाँव बसे हुए हैं। आदिवासी मजदूर और

जिन लोगों ने अंग्रेजों की गुलामी से भारत को मुक्ति दिलायी, आज उन्हीं लोगों से मुक्ति पाने की समस्या भारत की आम जनता के सामने विकट रूप में खड़ी है !

मजदूरिनें लकड़ी और पत्ता लेकर खड़गपुर आते रहते हैं। खेती के मौसम में खेती का काम भी करते हैं, लेकिन रोजी का असली धंधा जंगल में लकड़ी काटकर बाजार में बेचना है।

www.vinoba.in

मैंने पूछा तो नहीं, लेकिन बातचीत से ऐसा नहीं लगा कि मुन्नर स्कूल में गया होगा, या अगर गया भी होगा तो दो-एक दर्जे तक ही। हाँ, चेहरे से मंद नहीं था। दूसरे की बात समझ सकता था, और अपनी बात कह सकता था। बाजार आने-जाने और चाय की दूकान में बैठने से जमाने की बातें कान में पड़ी थीं। मुन्नर-जैसे लोगों के लिए चाय की दूकान, जिस पर हर वक्त रेडियो बजता रहता है, स्कूल का काम करती है। मुन्नर ने जो कुछ सीखा था इसी स्कूल में सीखा था। इतना कहना तो जान ही गया था : "मालिक, क्या कहीं हम लोगों की भी सुनवाई है ? जैसे बाप-दादा मरे, क्या उसी तरह हम लोग भी मर जायेंगे ? और हमारे बच्चे भी ?"

मुन्नर को इस बात की चिंता नहीं थी कि देश को विदेशी हमले से बचाना है। उसे इस बात की चिंता थी कि उसके पास जमीन नहीं है। उसका घर जिस जमीन पर है वह भी उसकी अपनी नहीं है। चिंता ही नहीं, उसके मन में गुस्सा भी था कि जिस मालिक के पास इतनी जमीन है वह क्या उसे एक टुकड़ा जमीन नहीं दे सकता ? और, जंगल का जो सिपाही लकड़ी काटने के लिए उससे दस पैसा रोज लेता है वह तो सरकार का ही आदमी है, फिर सरकार उसे क्यों नहीं रोकती ? मुन्नर की बात न मालिक सुनता है, न नेता सुनते हैं, न सरकार का हाकिम सुनता है। क्यों किसी जगह उसकी सुनवाई नहीं है ? वह जाये तो कहाँ जाये ? किससे कहे ? बस इतना उसने सुन रखा है कि चीनवाला मजूर को बहुत मानता है। 'वह आयेगा तो हमको जमीन देगा, मजूरी देगा।' क्रोध के साथ आशा की यह क्षीण रेखा उसके मन के किसी कोने में बनी हुई है।

मुन्नर को देश की चिंता नहीं है। हम लोग जो स्वतंत्रता की लड़ाई का जमाना देख चुके हैं, और देश के गीत गा और सुन चुके हैं, उनकी समझ में मुन्नर की बात नहीं आती। उसकी समझ में हमारी बात नहीं आती, और हमारी समझ में उसकी बात नहीं आती। हम उसे कैसे समझायें कि जब यह देश गुलाम था तो इसे अंग्रेजी राज से मुक्त करने के लिए कितनी कोशिश करनी पड़ी थी ? उसके मन में जैसे इन चीजों की कीमत ही नहीं है। वह मुक्ति को कुछ दूसरे ही ढंग से सोचता है। और यह कैसे कहा जाय कि उसका सोचना सही नहीं है ?

मुन्नर अनपढ़ है, लेकिन क्या वह अकेला है ? किसी गाँव में जाइए। गाँव के पास जाकर लोगों के दिल के पास जाइए। एक ही बात सुनने को मिलेगी। वही गुस्सा, वही निराशा, वही अविश्वास ! क्या छोटा किसान, क्या दस्तकार, और क्या भूमिहीन मजदूर, बंटाईदार, हरिजन और आदिवासी, सब मुन्नर की ही तरह हैं। जोड़ डालिए तो देश भर में इनकी संख्या करोड़ों-करोड़ की होगी। ये सब अनपढ़ हैं। इनसे अलग स्कूल-कालेज में चले जाइए। वहाँ क्या मिलेगा ? वहाँ जो युवक हैं वे तो पढ़े-लिखे हैं। उनकी गिनती किसमें होगी ? दफ्तर के बाबुओं को क्या समझा जायगा ? इसी तरह जोड़ते जाइए। ये सब समझते हैं और कहते हैं कि देश की बात तो उनके लिए है जो नेता हैं, हाकिम हैं। ये ही १५ अगस्त और २६ जनवरी को झंडा फहराते हैं। ये ही सलामी लेते हैं, भाषण देते हैं, और ये ही देश के नाम में दूसरों को ललकारते हैं। इन्हींकी सरकार है, इन्हींके खेत हैं, इन्हींके कल-कारखाने हैं, और इन्हींके स्कूल, अदालतें, कोआपरेटिव, पंचायतें आदि सब हैं। देश की दुनिया दो है—एक मुन्नर की, दूसरी इनकी। कभी इन्होंने देश के लिए तकलीफ सही थी, देश को गुलामी से मुक्त किया था, लेकिन आज तो मुन्नर इन्हींसे मुक्त होना चाहता है। मुन्नर देश को अपना तब मानेगा जब देश में उसका अपना कुछ हो जायगा।

बच्चों की बगिया

गाँव हमारा हमको प्यारा जी

हम गवईं के, गाँव हमारा हमको प्यारा जी।
गाँव हमारा जी।

यहीं हमारी खेती-बारी, हल, बैलों की जोड़ी।
यहीं हमारे ताल-तलैया, बगिया लम्बी चौड़ी।
यहीं हमारे काका, काकी, अम्मा, दीदी, भाई।
बसे यहीं, बढ़ई, हलवाहा, मोची, धोबी, नाई।
जनम हुआ तब से ही हमने, जीवन यहाँ बिताया।
इसकी ही मिट्टी में खेले, अन्न यहीं का खाया।
खेला करते इसकी बगिया में हम ओल्हा-पाती।
पके-पकाये आम लूटते, जब भी आँधी आती।
हम गवईं के, गाँव हमारा हमको प्यारा जी।
छोटे-बड़े सभी को इसका मिले सहारा जी॥

—चन्द्रभान

ग्रामदान के बाद हमने क्या किया ?

www.vinoba.in

हमारे गाँव का ग्रामदान बाबा राघवदास की प्रेरणा से हुआ। गाँव के ग्रामदान होने के कुछ ही समय बाद पड़ोसी गाँव के महाजन व रिश्तेदार भाई-बन्धु कहने लगे : 'अब तुम्हारे गाँव में रह ही क्या गया है जब कि तुम लोगों ने ग्रामदान कर दिया है!' ऐसा सुनते-सुनते अचानक गाँव में झगड़ा हो गया। बस, फिर ग्रामदान-वापस की दरख्वास्त कलक्टर साहब के यहाँ दी गयी। वकीलों की राय से झूठी बातें लिखायी गयी थीं, जो जाँच के समय गंगा-तुलसी पर जब पूछा गया तो दरख्वास्त झूठी साबित हुई। 'एक बनो नेक बनो' की चर्चा मैं बराबर करता रहा। ग्रामदान का नाम नहीं लिया एक वर्ष तक, परन्तु बिना ग्रामदान के मुझे चैन कहाँ? फिर समझाना शुरू किया तो कुछ ही परिवार तैयार हुए और हस्ताक्षर कर दिये। अधिकांश अड़े रहे। मैं अपना विश्वास व जो ग्रामसभा थी उसका विश्वास गाँव को देता रहा, किन्तु गाँव के लोग अपनी जगह अटल रहे। मैं मन-ही-मन सोचता रहा कि पूज्य विनोबाजी कहते हैं, लिखते भी हैं कि जो कुछ होता है भगवान की मर्जी से होता है और अच्छे कार्य की मदद सदैव भगवान करते हैं। बस, मैंने भगवान को स्मरण कर कहा, 'भगवान, यह ग्रामदान तो सबकी भलाई का कार्य है तो यह कार्य क्यों नहीं पूर्ण होता? अगर मुझमें कहीं कोई कमी है तो तू उसे दूर कर या, गाँववालों के समझने में कमी है तो मैं अब जिन्दा नहीं रहना चाहता।' प्रातःकाल पूरा ग्राम घूमकर, जो भी भाई-बहन मिले सबको प्रणाम कर गाँव से दो मील दूर गंगा नदी के किनारे जंगल में बैठ गया। दूसरे दिन जंगल के एक साधु ने आकर गाँववालों को बताया। गाँव से श्री महादेव भाई और श्री कृष्णकुमार मिश्र, ये दो मित्र मेरे पास आये और मुझे समझा-बुझाकर गाँव लिवा लाये। गाँव में भी मेरा अनशन चलता रहा। कुछ लोग मेरे पास आये और कहने लगे कि 'उपवास से डराकर ग्रामदान कराना चाहते हैं?' मैंने कहा, 'नहीं, उपवास से मेरे शरीर की चाहे जो दुर्गति हो जाय वह दुर्दशा देखकर आप लोग कतई ग्रामदान नहीं करें। हाँ, अगर ग्रामदान का विचार आपको जँचे और उससे इस गाँव का भविष्य उज्ज्वल दीख पड़ता हो तो आप लोग हस्ताक्षर करें अथवा न करें।' गाँव के कई परिवारों में खलबली मची। सब एक-दूसरे के दरवाजे जा-जाकर कहने लगे, क्या होना चाहिए? सभी ने एकत्र होकर एक राय से यह निश्चय किया कि ग्रामदान होना चाहिए। इस निश्चय के बाद मेरे पास सभी लोग आये और कहा कि 'ग्रामदान के लिए हम सब लोग तैयार हैं। लाइए ग्रामदान का फार्म, हस्ताक्षर कर दें।' मैंने कहा, 'मेरी इच्छा है कि तहसील चलें।' सब लोग एक स्वर से बोल पड़े, 'हम सब तैयार हैं।' गाँव के कुल ८० परिवारों के १०० व्यक्ति १२ मील दूर तहसील को चल पड़े, यह नारा लगाते हुए—

"लेखपाल के बस्ते से—नाम कटाने जाते हैं।
नाम कटाने जाते हैं—लेखपाल के बस्ते से।"

जब तहसील के अन्दर पहुँच गये तो जोश भरे शब्दों में मुहाफिजखाने की ओर इशारा करते हुए नारा लगाया कि—

"मुद्दत से बंधे नामों को—मुक्त कराने आये हैं।
मुक्त कराने आये हैं—मुद्दत से बंधे नामों को।"

और कृष्णकुमार मिश्र ने यह सामूहिक गीत गवाया—

"यह अर्थ-विषमता का ढाँचा, भूदान न टिकने अब देगा।
अन्याय-जबरदस्ती जग में, ग्रामदान न टिकने अब देगा।"

तहसील के सभी कर्मचारी आपस में चर्चा करते हुए दाँतों तले अंगुली दबाये रहे कि एक-एक बिस्वा भूमि के लिए लोग कितना रुपया बरबाद करते हैं! भाई-भाई का गला काटते हैं! ये लोग धन्य हैं, जो अपनी जमीन की मालकियत से नाम कटाने आये हैं। श्री कृष्णकुमार मिश्र ने तहसीलदार साहब से दो मिनट का समय माँगा। तहसीलदार साहब हम लोगों के बीच आकर बैठे। कृष्णकुमार भाई ने ग्रामदान की व्याख्या करते हुए तहसीलदार साहब से कहा कि 'भूमि की मालकियत के कारण समाज में जो संघर्ष है उसीको हम मिटाने आये हैं। मेरी चाह है कि मिट्टी का टीका सभी कृषकों के माथे में आप लगावें।' तहसीलदार साहब ने सभी कृषकों के माथे में टीका लगाया। बाद में सब लोग गीत गाते हुए भैरवाकला वापस आये।

गाँव की धरती में गाँव-राज्य

हमारे गाँव का ग्रामदान हुए १० वर्ष बीत रहे हैं। अब तक भूमि के लिए किसी प्रकार विवाद नहीं हुआ। और इसलिए लोगों को पटवारी के पास व थाना, कोर्ट-कचहरी नहीं जाना पड़ा। अब गाँव की धरती में गाँव का राज्य है, कोर्ट-कचहरी का नहीं। जब कभी विशेष परिस्थिति पर कोई भाई जमीन बेचता या खरीदता है तो कोर्ट-कचहरी नहीं जाना पड़ता और स्टाम्प, बयनामा दाखिल-खारिज, वकील आदि में जो सैकड़ों रुपया बर्बाद होता था, अब गाँववालों को दो नया पैसा भी लगाना नहीं पड़ता। गाँव के बालिग सदस्यों द्वारा जो सर्वसम्मति से १५ व्यक्तियों का सर्वोदय मंडल बना हुआ है, वह आकस्मिक विवादों में सर्वसम्मत निर्णय देता है। ग्रामीण भाई उसे सहर्ष स्वीकार करते हैं। →

ग्राम-शांति-सेना

www.vinoba.in

ग्राम-स्वराज्य के भवन की बुनियाद ग्रामदान है, और ग्राम-शांति-सेना इसका खम्भा है। इसलिए प्रत्येक ग्रामदानी गाँव में ग्राम-सभा के मातहत ग्राम-शांति-सेना का संगठन आवश्यक है। नीचे हम उसकी आवश्यक जानकारी दे रहे हैं :

उद्देश्य

१ – गाँवों में आपस के झगड़े न हों और यदि हों जायँ तो शांतिपूर्ण ढंग से उनके सुलझाने का प्रयास करना।

२—गाँव की सुरक्षा का प्रबंध करना।

३—गाँवों में चल रहे सामाजिक, आर्थिक अन्याय, उत्पीड़न आदि का शांतिमय समाधान कराने का प्रयत्न करना।

४—गाँव की सामाजिक कुरीतियों को लोक-शिक्षण तथा अन्य शांतिमय उपायों से दूर करने का प्रयास करना।

५—गाँव में हर प्रकार के जाति, धर्म, पंथ, पक्षवालों के बीच सद्भावना एवं सहकार हो, इसका प्रयत्न करना।

६—पड़ोस के गाँव के साथ सद्भाव का एवं भाईचारे का सम्बन्ध स्थापित करना।

७—गाँव के युवकों का संगठन तथा रचनात्मक दिशा में उनका प्रशिक्षण करना।

८—ग्राम-सभा के आदेश के अनुसार सभा ऐसे कार्य करना, जिससे गाँव सर्वोदय के आदर्शों की तरफ प्रगति कर सके।

९—देश में अहिंसक-शक्ति का निर्माण करना।

संगठन

१—ग्राम-शांति-सेना ग्राम-सभा का एक अंग होगी और उसके मातहत काम करेगी। इस प्रकार हर ग्राम-सभा में एक ग्राम-शांति-केन्द्र होगा।

२—ग्राम-शांति-सेना के संगठन तथा कार्य-संचालन के लिए ग्राम-सभा शांति-केन्द्र स्थापित कर एक छोटी-सी उप-समिति गठित करेगी, यह उप-समिति एक नायक की नियुक्ति करेगी।

३—१८ से ३५ वर्ष के बीच का कोई भी युवक या युवती, जो ग्राम शांति-सेना का प्रतिज्ञा-पत्र भरे, वह ग्राम-शांति-सेना का सदस्य बन सकता है। ग्राम-शांति-सेना का हर सदस्य शांति-सेवक कहलायेगा।

४—ग्राम-शांति-सेना की सबसे छोटी इकाई पाँच शांति-सेवकों से आरम्भ होगी। जिसे पंजा कहा जायेगा और जिसका एक पंजा-नायक होगा। दस शांति-सेवकों का एक दस्ता बनेगा, जिसका एक दस्ता-नायक होगा। तीन या उससे अधिक दस्तों को मिलाकर जत्था बनेगा, जिसका एक जत्था-नायक होगा।

गणवेश

कर्तव्यों के समय भाइयों एवं बहनों, दोनों के लिए सफेद वस्त्र, गले में केसरिया रंग का खादी का २७"×२७" का स्कार्फ तथा बाँह पर ८" × ४" की केसरिया रंग की खादी की पट्टी होगी, जिस पर शांति-सेवक लिखा होगा।

कार्यक्रम

बुनियादी तौर पर ग्राम-शांति-सेना के मुख्य तीन कार्य रहेंगे : १—श्रम, २—स्वाध्याय, ३—सेवा।

ग्राम-सभा के निर्देशानुसार ग्राम-शांति-सेना अपनी प्रवृत्तियाँ तय करेगी, जिसके लिए सामान्य रूप से निम्नलिखित कार्यक्रम सुझाये जा रहे हैं :

(क) श्रम—

१—सुलभ-स्वच्छ शौचालय का निर्माण।

२—कम्पोस्ट-खाद बनाना।

३—ग्राम-सफाई का कार्यक्रम, जैसे—कुओं के आसपास, नदी और तालाब के किनारे की सफाई आदि।

४—सड़क, भवन आदि का निर्माण व मरम्मत तथा खेती में सुधार, वृक्षारोपण, सिंचाई-व्यवस्था आदि विकास-कार्य।

५—ग्राम-विकास के कार्यों के लिए भूमिहीन श्रमिकों का संगठन करना तथा अधिक अन्न उत्पादन में योग देना।

→ मुझे लगता है कि मेरे गाँव में पूज्य महात्मा गांधीजी का ग्रामस्वराज्य का सपना साकार सा हो रहा है।

गाँव की प्रगति

शिक्षा : पहले ५ प्रतिशत पुरुष शिक्षित थे। अब शिक्षा के अधिक प्रचार से गाँव में जूनियर हाईस्कूल खोला गया है, जिसमें २० प्रतिशत बालक-बालिकाएँ शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

कृषि : गाँव की दो हिस्सा भूमि असिंचित रहती थी। अब ट्यूबवेल (पम्पिंग सेट) लगा है, परन्तु बोरिंग सफल नहीं है, जिससे सम्पूर्ण कृषि सिंचित की जा सके। पिछले दो वर्षों से प्रकृति साथ नहीं दे रही है।

आर्थिक : गाँव पहले पड़ोसी महाजनों का कर्जदार तो था ही, किन्तु अब सहकारी बैंकों का कर्जदार है।

ग्राम के लोग सामाजिक, आर्थिक, शिक्षा आदि की उन्नति के लिए अत्यधिक प्रयत्नशील हैं।

—गयाप्रसाद, भैरवा कलाँ, फतेहपुर

www.vinoba.in

(ख) स्वाध्याय—

१—अध्ययन-केन्द्र प्रारम्भ करना।

२—पुस्तकालय गठित करना।

३—पत्र-पत्रिकादि का वाचन तथा ग्रामवासियों को सुनाना।

४—भजन-मंडलियाँ, नाटक-मंडलियाँ तथा अन्य प्रकार के सांस्कृतिक संगठनों का आयोजन करना।

५—ग्राम स्वराज्य एवं सर्वोदय-आन्दोलन से सम्बन्धित पत्रिकाओं के ग्राहक बनाना।

६—तात्कालिक समस्याओं के सम्बन्ध में विचार-विमर्श।

७—ग्राम-विकास सम्बन्धी विभिन्न विषयों पर गोष्ठियाँ आदि आयोजित करना।

(ग) सेवा—

१—आकस्मिक विपत्ति के समय सेवा एवं राहत-कार्य।

२—जरूरतमंदों के लिए आवश्यक प्राथमिकोपचार और अन्य चिकित्सा के साधनों की उपलब्धि करना।

३—पर्व-त्योहार को प्रेम एवं सौहार्दपूर्वक शिक्षणात्मक रीति से मनाने का आयोजन करना।

४—पुलिस-अदालत मुक्ति का प्रयास करना।

५—व्यसन-मुक्ति आदि के लिए लोकशिक्षण करना।

६—विवाह, सभा, त्योहार, मेले आदि में प्रत्यक्ष सेवा के कार्यक्रम उठाना।

७—गाँव के झगड़े का निबटारा गाँव में करना।

(घ) केन्द्र के सामूहिक कार्यक्रम—

प्रार्थना, श्रम-यज्ञ, खेल-कूद, भोजन बनाना, सब्जी काटना, पानी भरना आदि।

(च) आन्दोलन से सीधा सम्बन्ध रखनेवाले कार्य—

१—शांति-पात्र रखवाना।

२—शांति-पात्रों का अनाज आदि संग्रह करना।

३—सर्वोदय-मित्र बनाना।

४—ग्रामदान-प्राप्ति के कार्य में भाग लेना।

५—ग्रामदान-पुष्टि के कार्य में सहायता देना।

६—ग्राम-कोष इकट्ठा करने में तथा भूमि के वितरण में सहायता देना।

ग्राम-शांति-सेना का प्रतिज्ञा-पत्र

१—मैं मानता हूँ कि गाँव तथा देश के सर्वांगीण हित के लिए समाज में हमेशा शांति बनी रहनी आवश्यक है।

२—मैं राष्ट्रीय एकता, लोकतंत्र, सर्वधर्म-समभाव में विश्वास रखता हूँ।

३—मैं मानता हूँ कि लोकतंत्र की बुनियादी इकाई ग्राम-स्वराज्य है।

इसलिए मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि ग्राम-स्वराज्य को पुष्ट तथा विकसित करने के लिए ग्राम-शांति-सेना के उद्देश्यों को मानते हुए उसके सभी कार्यक्रमों में भाग लूँगा तथा निर्देशों का पालन करूँगा।

हस्ताक्षर..............................

दिनांक..............................

नाम..............................

पता..............................

....

विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें।

अखिल भारत शांति-सेना-मण्डल, राजघाट, वाराणसी-१

कितने बेकार ?

बेकार लोग सन् १९५१ में ३३ लाख थे,

सन् १९७३ में १ करोड़ ४० लाख हो जायंगे।

ऐसे लोगों की संख्या बढ़ती ही जा रही है, जिनके पास कमाई का कोई काम नहीं है, जो बेकार हैं। अगर उन सब लोगों को जोड़ लिया जाय, जिनके पास पूरी कमाई का काम नहीं है, या साल में कुछ ही महीनों का काम है, तो किसी एक दिन संख्या १० करोड़ तक पहुँच जायगी। जो गलत ढंग से कमाई कर रहे हैं उनकी संख्या भी बहुत बढ़ी है। देश में सौ में आठ लोग ऐसे हैं, जिनकी कमाई महीने में ७५ रु० से ज्यादा नहीं है। इस जमाने में ७५ रु० माहवार की कमाई भी कोई कमाई है, और इस कमाई का काम भी कोई काम है? सच पूछा जाय तो अच्छी कमाई करनेवाले देश में कुल ५० लाख लोगों से ज्यादा नहीं हैं। ५५ करोड़ में बस ५० लाख! शहरों की चमक-दमक, नयी-नयी डिजाइन के कपड़े, तरह-तरह के सामान, नित्य नये फैशन, सब इन्हीं ५० लाख की बदौलत है, और उन्हींके लिए देश की बेशुमार पूँजी का इस्तेमाल हो रहा है। उन्हींके हाथ में शासन है, व्यापार-उद्योग है, खेती है, विद्या-बुद्धि है।

मर्दानी ही नहीं, लुभावनी भी !

'जमाने की हवा के साथ बगिया को लहराना ही पड़ता है,'... चौथिया की कही हुई यह बात नयनतारा के कानों में बड़ी देर तक गूंजती रही। चौथिया बोलने में मुंहफट है, यह नयनतारा जानती है। वह पद में भाभी लगती है, इसलिए गाँव के रिवाज के अनुसार अपनी ननद और देवर के साथ हँसी-मजाक भी कर लेती है। चौथिया ने रामदेव और काकी की बातों का जो मुंहतोड़ उत्तर दिया था, उससे नयनतारा भौचक्की रह गयी।

नयनतारा को जब से होश हुआ तब से वह चौथिया को देखती-सुनती आ रही है। इस समय जो चौथिया बिना घूंघट किये गाँव के रास्ते पर चलती है, वही उन दिनों घूंघट निकालकर बाहर निकलती थी। उन दिनों चौथिया अपने माथे पर टिकुली लगाने और पैरों में गुलाबी रंग भरने का बराबर ध्यान रखती थी।

चौथिया के बारे में सोचते-सोचते नयनतारा को बारह वर्ष पुरानी झूलेवाली घटना की याद आ गयी। वह घटना बारह वर्ष पुरानी है, लेकिन जैसे वह पिछले साल की ही बात हो ! सावन के दिन थे। बरसात की हलकी झड़ी लगी हुई थी। सामने के नीम के पेड़ पर झूला पड़ा हुआ था। नयनतारा झूले पर बैठी थी और रामदेव भैया धीरे-धीरे झूला झुला रहे थे। इतने में चौथिया एक ओर से आयी और उछलकर झूले पर बैठती हुई बोली—'बबुआ, आज मेरे साथ झूला झूलो। तुम झूला झुलाओ और मैं सुनाऊंगी एक लहरदार कजली।' चौथिया ने जब यह कहा तो भैया जैसे हवा में उड़ने लगे ! झूले का वेग धीरे-धीरे बढ़ने लगा। नयनतारा को अच्छी तरह याद है कि झूले का वेग इतना बढ़ गया था कि उसे चौथिया की देह से सटकर अपनी आँखें बन्द कर लेनी पड़ी थीं। चौथिया ने उस समय क्या गाया था यह तो याद नहीं है, लेकिन भैया का पूरी शक्ति से पेंग भरना और चौथिया का हँस-हँसकर गाना जैसे पिछले ही साल की घटना हो। झूले की गति जब बहुत बढ़ गयी तो मैं चीखने को लाचार हो गयी थी। झूला धीमा हुआ तो झूले पर से उतरते हुए चौथिया ने शेखी से मुझे ठुनकियाते हुए कहा था—'बस, चार-छः साल और गम करो, फिर तो तुम मेरा भी कान काटोगी !'

देखते ही देखते बारह साल बीत गये। इसी बीच एक दिन पारबती भौजी शहर से गाँव आ गयीं। पारबती भौजी के गाँव में आते ही जैसे चौथिया का स्वभाव ही बदल गया। चटकदार साड़ी की जगह सादे किनारे की साड़ी और टिकुली की जगह लाल बिन्दी ने ले ली। पहनने में सादगी आयी, लेकिन रहने का ढंग और साफ-सुथरा हो गया। मिट्टी का कच्चा घर हमेशा लीप-पोतकर साफ रखा जाने लगा, जैसे घर में कथा होनेवाली हो। गाँव में कोई सास अपनी पतोहू के साथ दुर्व्यवहार करे, कोई मरद अपनी घरवाली पर हाथ उठा दे, या कोई भावज अपनी ननद को सताने का रवैया दिखाये तो चौथिया सारे गाँव की स्त्रियों में खलबली मचवा देती।

पिछली पूर्णमासी के दिन रामनाथ की बहू चीखती-चिल्लाती अपने घर से बाहर आयी तो पास-पड़ोस में हड़कम्प मच गया ! बहू के बायें हाथ की कलाई लहू-लुहान हो रही थी। काँच की चूड़ियाँ चकनाचूर होकर कलाई में चुभ गयी थीं। रामनाथ के पिता बड़-बड़ाकर सुना रहे थे कि बहू त्रिया-चरित्र दिखा रही है। घर को बदनाम करने के लिए बहू ने अपने ही हाथों अपनी कलाई पर लोढ़े की चोट मार ली है।

चौथिया ने वहाँ पहुंचते ही बहू की खून से सराबोर कलाई को ठण्डे पानी से धोया और बहता खून रोकने के लिए अपनी साड़ी का आँचल पानी भिगोकर बहू की कलाई में लपेट दिया। जब बहू की कलाई से खून का बहना बन्द हुआ तो चौथिया ने रामनाथ के पिता को खूब करारी फटकार सुनाई थी—'अगर आपकी सगी बेटी इस तरह आपके आगे लहू-लुहान होकर सामने आती तो क्या आप ऐसे ही खड़े-खड़े काठ के देवता बने बाल की खाल निकालते ? थू है ऐसे लोगों की जिन्दगी पर, जो अपने पसीने को तो खून और दूसरे के खून को नाली का पानी समझते हैं !'

उस दिन की घटना के बाद चौथिया का गाँव भर में रंग जम गया। वह गाँव की मर्दानी औरत बन गयी।

पारबती भौजी के आँगन में चौथिया ने जो नाच-तमाशा किया उसने तो जैसे उसे और भी चमका दिया। नाच और तमाशे के बारे में मैंने चिकारी की तो चौथिया मुझे मुँहतोड़ जवाब दे गयी। किसीसे भी भिड़ जाना उसकी जैसे आदत है, लेकिन दिल से वह मर्दानी ही नहीं, लुभावनी और मनभावनी भी है। जैसे-जैसे नयनतारा चौथिया के बारे में सोचती वैसे-वैसे वह उसके रंग में डूबती जा रही थी।

—प्रियंका

कूड़े-कचरे से खाद बनायें—२

जानवरों का बाड़ा—जानवरों के बाड़े की फर्श को पत्थरों से या मुरंम-कंकड़ डालकर सख्त कर देना चाहिए। इस फर्श का ढलाव एक नाली की तरफ होना चाहिए, जो कि बाड़े की लम्बाई के साथ-साथ बनी हुई हो। जानवर बाड़े में अधिकतर शाम से सुबह तक बांधे जाते हैं। इस काल में फी जानवर से १५-२० पौंड गोबर तथा १०-१५ पौंड मूत्र, जानवरों के डील-डौल के अनुसार इकट्ठा होता है। इसके अतिरिक्त जो चारा बगैर खाये छूट जाता है अथवा चर से बाहर निकल पांवों से कुचलकर बिगड़ जाता है, इसकी मात्रा भी परिस्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है, जो इस बात पर निर्भर करती है कि चारे की किस्म क्या है, किस प्रमाण में डाला गया है तथा कुट्टी किया हुआ है या पूरा ही है। गोबर, मूत्र व खराब चारे के सिवाय खेत का कूड़ा-कचरा भी, जो कि जानवरों के खाने के काम में नहीं आ सकता है, खाद बनाने के काम में लिया जा सकता है। फालतू कूड़े-कचरे का परिमाण खेत की फसल की किस्म पर निर्भर रहता है। गन्ने के खेत में अखाद्य कचरे की मात्रा सबसे अधिक (३-५ टन प्रति एकड़) होती है, कपास, अरंड, अरहर तथा जुआर के खेत में उससे कम (१–१½ टन प्रति एकड़), और सबसे कम अनाज के खेत में होता है। वहां पर खर-पतवार या ठूंठ का फालतू कचरा होता है। आजकल अधिकतर अखाद्य कचरे को किसान घर पर लकड़ी की जगह जलाने के काम में बराबर कर देता है।

जानवरों के बाड़े का इन्तजाम

जो चारा जानवरों द्वारा चर से खींचकर नीचे डाल दिया गया हो, उसे रोज सुबह अलग इकट्ठा करके शाम को जानवरों के नीचे जहां मूत्र फैलता हो, बिछाने के काम में लेना चाहिए। खेत पर इकट्ठा किये हुए अखाद्य कचरे के थोड़े-से हिस्से को भली प्रकार टुकड़े करने के बाद खराब चारे में मिला देना चाहिए, जिससे कुछ वजन पांच-दस पौंड प्रति जानवर के हिसाब से हो जाय। सूखे कूड़े-कचरे को बिछावन के तौर पर काम में लेने से न केवल ऐसे कचरे को सड़ने में सहायता मिलती है, बल्कि रात में किये हुए मूत्र का बहुत-सा हिस्सा भी सोख लिया जाता है। सूखे कचरे का बिछावन पर्याप्त मात्रा (दस-पंद्रह पौंड प्रति जानवर) में होने से मूत्र का बहुत थोड़ा हिस्सा नाली द्वारा बेकार जाता है। फिर भी नाली में १ इंच मोटी मिट्टी की तह बिछा देना और फिर मूत्र से तर हिस्से को खुरचकर प्रतिदिन सुबह खाद की खाई में डाल देना उचित होगा।

जहां बाड़े की फर्श केवल सख्त मिट्टी की है, वहां यह मालूम हो जाय कि मूत्र कुछ खास जगहों पर जमा होता है, क्योंकि जानवरों के बांधने की जगह मुकर्रर होती है। ऐसी दशा में पेशाब इकट्ठा करने के लिए निम्नलिखित तरीका काम में लाना चाहिए। जहां पेशाब इकट्ठा होकर जमीन में जब्त हो जाता है वहां की जमीन में दो फीट लम्बा दो फीट चौड़ा और लगभग छः इंच गहरा गड्ढा खोदकर उसमें पुरानी ईंटों की या पत्थरों की एक सतह बिछा देनी चाहिए। यह ईंटों या पत्थरों की सतह जमीन की सतह से दो इंच गहरी रहनी चाहिए और इसका ढाल भी फर्श की जमीन के अनुसार ही होना चाहिए। उस गड्ढे के गहरे सिरे पर प्रतिदिन २-६ इंच मोटी, बारीक कूड़े-करकट की तरह लगा देनी चाहिए। मोटे कूड़े-करकट को बाड़े के दरवाजे पर या रास्ते में, जहां जानवर आते-जाते हैं डालकर तुड़वाकर बारीक कर लेना चाहिए। जहां बारीक कूड़ा-करकट न मिल सके, वहां पर अधसड़ी खाद या तीन-चार महीने का कम्पोस्ट या सूखी मिट्टी पेशाब की इस गहरी जगह को भरने के काम में आ सकती है।

सुबह जानवर जब बाड़े से बाहर निकलते हैं, तब जो चारा चर से घसीटकर नीचे डाल दिया गया है, उसे ऊपर लिखे अनुसार अलग खींचकर शाम को मूत्र के खोखलों में बिछाने के काम में लेना चाहिए। जानवरों का गोबर, मूत्र में भीगा हुआ कचरा जो कि मूत्र के खोखलों में से खुरच गया हो नाली की मिट्टी या बाड़े में किसी दूसरी जगह मूत्र से भीगी हुई मिट्टी वगैरा सबको इकट्ठा करके बेलचे या दंतुए से अच्छी तरह मिला लेना चाहिए। जब मौसम गरम हो और फालतू कचरा पांच पौंड से ज्यादा प्रति जानवर बिछावन के तौर पर काम में लाया गया हो, तब कचरा और गोबर को मिलाते समय कुछ ऊपर से पानी मिलाया जा सकता है। ढेर में पर्याप्त मात्रा में नमी होने का प्रमाण यह है कि ढेर से मुट्ठी भर कचरा हाथ में लेकर धीरे से दबाकर फेंक दिया जाय तो हाथ में गीलापन रहना चाहिए। यानी ढेर में से पानी बहकर नहीं जाना चाहिए तथा सबको मिलाते समय बाड़े की फर्श गीली नहीं होनी चाहिए।

—बनवारीलाल चौधरी

वैभव की फैलती दुनिया और टूटता-बिखरता आदमी—५

www.vinoba.in

लेकिन आशा की एक किरण इस भयंकर हालत में भी दिखाई देने लगी है। कहा जाता है कि बिच्छू घास के पास ही उसके जहर को मारनेवाली एक और घास भी पैदा होती है, शायद ऐसी ही कोई चीज पैदा हो रही है। दुनिया के कुछ बहुत ही समझदार लोग यह सोचने लगे हैं कि जिन्दगी के इस आकार-प्रकार को बदलना ही पड़ेगा। अगर आदमी को धरती पर जिन्दा रहना है तो ये विचारक लोग यह मानने लगे हैं कि :

(१) मनुष्य की क्षमता को समाप्त करनेवाली भीमकाय मशीनें हमें नहीं चाहिए, हमें ऐसी मशीनें चाहिए, जो मनुष्य की कार्य-कुशलता बढ़ाने में सहायक हों। मशीन मनुष्य को न चलाये, मनुष्य अपनी मर्जी के मुताबिक मशीन को चलाये।

(२) हमें ऐसे महानगर नहीं चाहिए, जहाँ मनुष्य की भीड़ का तो पारावार न हो, लेकिन मनुष्य हर जगह मनुष्य से अजनबी हो, अपरिचित हो। हमें ऐसी बस्तियाँ चाहिए जहाँ आदमी आदमी को पहचाने, एक-दूसरे के साथ जुड़े, एक-दूसरे के काम आये और हर तरह से एक-दूसरे के जीवन के खालीपन को भर सके।

(३) हमें ऐसी राष्ट्रीयता नहीं चाहिए, जो पहले तो धरती को टुकड़ों में बाँटती है और फिर उन टुकड़ों में रहनेवालों को एक-दूसरे के खिलाफ उभाड़ती है, भय और नफरत पैदा करती है, और आखिर में युद्ध की भयंकर लपटों के हवाले कर देती है। हम तो महासागर की उन लहरों-जैसा एक-दूसरे से जुड़कर खेलना चाहते हैं, जहाँ कोई विभाजन नहीं है, हर बूँद एक-दूसरी से जुड़ी है।

(४) मशीनों ने उत्तेजना बढ़ानेवाली चीजें पैदा की हैं। मनुष्य के अन्दर झूठी जरूरतें पैदा की हैं और आज वह हृदय से शून्य होकर इन जरूरतों की मृगमरीचिका के पीछे भटक रहा है, उसके जीवन की कोई दिशा नहीं रह गयी है, कोई अर्थ नहीं रह गया है। हम चाहते हैं जीवन के मकसद की तलाशना, हृदय की शून्यता को भरना।

(५) हम ऐसा मनुष्य बनना चाहते हैं कि जिसके जीवन का पूरा-पूरा विकास हो, किसी एक हिस्से का नहीं। इसके लिए जरूरी होगा कि खेती और उसके सहायक उद्योगों के साथ ऐसी नयी बस्तियाँ बसें, जिनमें मनुष्य मनुष्य से परिचित होकर, एक-दूसरे से जुड़कर रह सके। उसके अन्दर की छिपी हुई प्रतिभाओं का पूर्ण विकास हो। पूरी दुनिया ऐसी ही आपस में जुड़ी हुई बस्तियों का विशाल समूह बने।

भारत की रचना इसी आधार पर अति प्राचीन काल में हुई थी। इसीलिए बड़ी-से-बड़ी कठिनाइयों को पार करके भी भारत बचा रहा। कितने ही विदेशी आक्रमणों और देशी राजाओं के कलह के बावजूद भारत के गाँवों की हस्ती मिटी नहीं।

…लेकिन दुःख होता है यह देखकर कि अब ये गाँव टूट रहे हैं। अगर भारत के गाँव टूट गये तो भारत का क्या हाल होगा? वही जो अमेरिका, आस्ट्रेलिया, ब्रितानिया आदि का है, उनके महानगरों का है।

…लेकिन आशा की एक किरण यहाँ भी दिखाई दे रही है। गांधीजी के बाद विनोबा ने ग्रामदान के नाम से ग्रामस्वराज्य के लिए जो आन्दोलन शुरू किया है, और जिसे भारत के १ लाख से अधिक गाँवों ने मान लिया है, वह ग्रामस्वराज्य गाँवों को टूटने से बचा सकेगा। ग्रामस्वराज्य की स्थापना से आज के गाँवों की कमजोरियाँ दूर होंगी और गाँव की जीवन-शक्ति पुष्ट होगी। ग्रामदान आन्दोलन गाँवों को ऐसी बस्तियों में बदलना चाहता है, जैसा कि आज पश्चिमी देशों के समझदार लोग वहाँ की दुर्दशा को देखकर नये सिरे से बसाने की बात सोच रहे हैं। उनके पास इस तरह के अनुभवों की कमी है। लेकिन भारत के पास इस प्रकार के भरपूर अनुभव हैं, इसलिए ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन सफल होकर पीड़ित, दुखी और हताश दुनिया को एक नयी दिशा दे सकेगा। लेकिन इसे सफल बनाने की जिम्मेदारी केवल विनोबाजी और उनके कुछ कार्यकर्ताओं की रहेगी तो वह कभी भी सफल नहीं हो सकता, वह तो सफल तब होगा, जब एक-एक आदमी इस काम में जुट जायेगा।

आज के राज में तो हर काम नेता, हाकिम, सैनिक और मशीन के द्वारा होता है, जिसका नतीजा यह है कि आदमी टूट रहा है और वैभव की दुनिया फल रही है। लेकिन ग्रामराज में तो गाँव और गाँववालों के किये ही सब कुछ होगा और जो होगा उसमें आदमी भी पुष्ट होगा, और दुनिया भी। (समाप्त)

'गाँव की बात' : वार्षिक चन्दा : चार रुपये, एक प्रति : अठारह पैसे

सम्पादक : राममूर्ति : सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी—१